बारहवां अध्याय

।। सारांश।।

विशेष - अध्याय 12 पूरा ब्रह्म साधना से होने वाले लाभ का परिचय देता है तथा अध्याय 13 पूर्ण ब्रह्म की महिमा से परिचित करवाता है।

अध्याय 12 के श्लोक 1 में अर्जुन ने प्रश्न किया कि जो कोई आपको निरन्तर भजते हैं तथा जो अविनाशी अदंश परमेश्वर को अति उत्तम भाव से भजते हैं। उनमें योग वेता कौन हैं अर्थात् भक्ति मार्ग का जानने वाला कौन है?

।। सत्यनाम व सारनाम के बिना ब्रह्म के उपासक काल जाल में ही रहते हैं।।

अध्याय 12 के श्लोक 2 में काल भगवान कह रहा है कि जो मुझे भजते हैं वे मुझे अतिउत्तम मान्य हैं। अध्याय 12 के श्लोक 3,4 में फिर कहा है कि जो कोई इन्द्रियों को भली-भाँति वश में करके मन बुद्धि से परे सर्वव्यापी, नित्य, अचल, अदंश, अविनाशी परमात्मा को शास्त्रों में दिए भक्ति के वास्तविक निर्देश को त्याग कर अर्थात् शास्त्रविधि को त्याग कर मन-माना आचरण (पूजा) करते हैं वे सम्पूर्ण प्राणियों का हित चाहने वाले सर्वत्र सम भाव वाले भी मुझको ही प्राप्त होते हैं। यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में है कि ज्ञानी आत्मा है तो उदार परन्तु तत्वज्ञान के अभाव के कारण मेरी अनुत्तम अर्थात् अश्रेष्ठ गति में ही आश्रित है।

विशेष :-- पवित्र वेदों व गीता जी में जानकारी तो उस अविनाशी अकथनीय अदंश (पूर्ण ब्रह्म सतपुरुष) की सही दे रखी है, परंतु पूजा विधि एक अक्षर ''ऊँ'' मन्त्र, यज्ञ आदि केवल निराकार काल भगवान का ही वर्णन कर रखा है। इसलिए मार्कण्डेय जैसे निर्गुण उपासक ''ऊँ'' मन्त्र का जाप करते हुए परमात्मा को निर्गुण-निराकार-अविनाशी मान कर साधना करते रहे अंत में पहुँचे महास्वर्ग में। इसलिए भगवान कह रहा है कि वे साधक भी मेरे जाल से बाहर नहीं हैं अर्थात् जो मेरे(कष्ण रूप के व विष्णु रूप के) उपासक विष्णु लोक में आ जाएंगे। मुझे ही प्राप्त होकर अपने पुण्यों कर्मों की कमाई रूपी मलाई खा कर नरक में चले जाएंगे। इसलिए मेरे को (विष्णु रूप में) भजने वाले जल्दी उपलब्धि प्राप्त कर लेते हैं परंतु यह भी साधना नादानों की ही है, अच्छी नहीं। क्योंकि गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में पूर्ण परमात्मा की यथार्थ साधना का निर्देश बताया है उस पूर्ण परमात्मा की साधना का ॐ-तत्-सत् यह तीन मन्त्र के जाप का निर्देश है। यहाँ गीता अध्याय 12 श्लोक 3-4 में कहा है कि जो साधक उस पूर्ण परमात्मा कि साधना अनिर्देश अर्थात् शास्त्रों के कथन विरुद्ध {शास्त्रविधि को त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा)}करते हैं वे उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त न करके ॐ नाम का जाप करके ब्रह्म लोक को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार काल लोक में ही रह जाते हैं। यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में है कि ये ज्ञानी आत्मा हैं तो उदार परन्तु तत्वज्ञान के अभाव के कारण मेरी अनुत्तम अर्थात् अश्रेष्ठ गति में ही आश्रित हैं।

अध्याय 12 के श्लोक 5 से 8 में कहा है कि जो निराकार मान कर साधना करते हैं वे शरीर को कष्ट दे कर कोशिश करते हैं यह दुःख पूर्वक होती है जिसको आम साधक नहीं कर सकता। इसलिए मेरी (विष्णु रूप की) पूजा अनन्य भक्ति से करते हैं उनका जल्दी उद्धार करके मंत लोक

से पीछा (कुछ समय के लिए) छुड़वा दूंगा तथा वे मेरे को विष्णु मान कर पूजते हैं इसलिए विष्णु लोक में ही आ जाएंगे। वहाँ अपने पुण्यों को समाप्त करके फिर जल्दी ही नरक व चौरासी लाख जूनियों में चले जाते हैं। गीता जी के अध्याय 14 के श्लोक 6, 14, 18 ।

अध्याय 12 के श्लोक 9 से 18 तक में भगवान (ब्रह्म) कह रहा है कि मन को अचल करने (रोकने में) में सफल नहीं है तो अभ्यास योग(नाम जाप) कर। यदि अभ्यास योग में भी असमर्थ है तो शास्त्रानुकूल कर्म करता रहे। यदि ऐसा भी नहीं कर सकता तो मन-बुद्धि आदि पर विजय प्राप्त करने वाला होकर कर्म फलों को त्याग कर इससे (त्याग से) तुरंत शांति हो जाती है। जो भक्त राग-द्वेष रहित है वह मुझे अतिप्रिय है।

विशेष : काल ब्रह्म ने कहा है कि मन को रोक कर कर्मफल का त्याग कर दें। जब मन रूक गया तो मुक्ति निश्चित है। {मन तो न शिव से, न ब्रह्मा से, न विष्णु से तथा न ब्रह्म(काल) से रूक सका। अर्जुन मन कैसे रोक सकता है? मन स्वयं काल(ब्रह्म) है। एक हजार भुजाओं (कलाओं) वाले भगवान को तो परम अक्षर ब्रह्म(पूर्णब्रह्म सतपुरुष) के जाप से (जो असंख्य भुजाओं वाला है) रोका जा सकता है। उस परमात्मा के उपासक संत से नाम लेकर गुरु मर्यादा में रहते हुए नाम अभ्यास योग से युक्त भक्त ही मुक्त हो सकता है।} पाठक स्वयं विचार करें ब्रह्म साधना से मन रूक नहीं सकता। इसलिए पूर्ण मुक्ति नहीं है।

अध्याय 12 के श्लोक 19,20 में कहा है कि जो निन्दा स्तुति में समान समझने वाला मननशील, रूखे-सूखे भोजन में संतुष्ट, ममता रहित, स्थिर बुद्धि भक्ति सहित साधक मुझे बहुत प्रिय है और जो मैंने ऊपर विधान (मत) बताया है उसका आचरण (सेवन) करने वाला अतिशय प्रिय है। अर्थात् काम, क्रोध, राग-द्वेष, लोभ-मोह से रहित, निन्दा स्तुति में सम रहने वाला भक्त मुझे बहुत प्रिय है। पाठक स्वयं विचार करें।

ऐसी क्षमता तो तीनों भगवानों (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) में भी नहीं है तो आम भक्त (साधक) ऐसा कैसे कर सकता? इसलिए वह काल (ब्रह्म) भगवान को प्रिय हो नहीं सकता और परमात्मा प्राप्ति भी नहीं हो सकती। इति सिद्धम् कि कर्म आधार पर स्वर्ग, नरक, चौरासी लाख जूनियाँ ही जीव को ब्रह्म साधना से अन्तिम उपलब्धि होती है।

विशेष :- अगले अध्याय 13 के श्लोक 12 से अन्तिम श्लोक 34 तक गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर का ज्ञान करवाया है। श्लोक 29 तथा 32 में सामान्य ज्ञान है। उसी पूर्ण परमात्मा के विषय में इस अध्याय 12 के श्लोक 20 में कहा है कि जो साधक मत परमाः यानि मेरे से श्रेष्ठ परमात्मा की भक्ति ऊपर बताए नियमों में रहकर करता है, वह मुझे अतिशय प्रिय है।

विवेचन :- ''मत्परमाः'' शब्द का अर्थ एस्कोन वाले अनुवादक ने ''मुझ परमेश्वर को सब कुछ मानते हुए'' किया है तथा अन्य अनुवादकों ने ''मत्परमाः'' शब्द का अर्थ मेरे परयाण होकर'' किया है जो अनुचित है। इसका अर्थ ''मेरे से श्रेष्ठ'' करना उचित है क्योंकि गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में एस्कोन वालों ने ''परमा'' का अर्थ ''परम'' किया है। परम का अर्थ श्रेष्ठ है। अन्य अनुवादकों ने भी इसी अध्याय 8 के श्लोक 13 में ''परमा'' का अर्थ ''परम'' किया है जो उचित है। यदि इस अध्याय 12 के श्लोक 20 में ''परमा'' का अर्थ ''परम'' कर दिया जाए तो ''मत् + परमाः'' का अर्थ मेरे से परम यानि श्रेष्ठ परमात्मा के भक्त मुझे अतिशय प्रिय हैं, सही अनुवाद बन जाता है जो आगे के अध्याय 13 के श्लोक 12-28 तथा 30, 32-34 तक से संबंधित है। वैसे तो अध्याय 13 सम्पूर्ण में गीता

ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा का ज्ञान है। अब आगे पढ़ेंगे, देखेंगे प्रत्यक्ष प्रमाण, परंतु लेखक का उद्देश्य यह है कि पाठकों को अन्य अनुवादकों के द्वारा किया गया अर्थों का अनर्थ भी दिखाऊँ। जैसे इस अध्याय 12 के श्लोक में ''परमा'' का अनर्थ कर रखा है। एस्कोन वालों ने मत् का अर्थ मुझे तो ठीक किया, ''परमा'' का अर्थ परमात्मा कर दिया, यह गलत है। एस्कोन वालों ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में ''परमम्'' का अर्थ ''दिव्य'' किया है। यह ठीक है। इस प्रकार अर्थ करने से मत् परमाः का अर्थ मेरे से दिव्य परमात्मा को भजने वाला मुझे अतिशय प्रिय है क्योंकि प्रधानमंत्री के भक्त यानि फैन को प्रान्त के मंत्री विशेष सम्मान देते हैं जो मुख्यमंत्री के भक्त यानि प्रशंसक होते हैं। इसी प्रकार परम अक्षर ब्रह्म के भक्त को काल विशेष सम्मान देता है। इस अध्याय 12 श्लोक 20 में गीता ज्ञान दाता से अन्य का वर्णन है जिसके विषय में अगला अध्याय 13 भरा पड़ा है।

❑❑❑